5 औद्योगिक समाज में परिवर्तन और विकास

12110CH05

आपने आखिरी बार कौन सी फिल्म देखी थी? आप निश्चित रूप से उसमें कार्य कर रहे अभिनेता एवं अभिनेत्री का नाम बता सकते हैं, परंतु क्या आपको ध्वनि एवं प्रकाश तकनीशियन, शृंगार करने वाले कलाकार और नृत्य निर्देशक का नाम याद है? कुछ लोगों का जैसे सेट को तैयार करने वाले बढ़ई (कारपेंटर) के नाम का तो कहीं आभार के लिए जिक्र भी नहीं होता है। जबकि, इन सब लोगों के सहयोग के बिना फ़िल्म बनाई नहीं जा सकती है। बॉलीवुड आपके और मेरे लिए एक स्वप्न लोक की तरह हो सकता है, परंतु बहुत से लोगों के लिए यह उनके कार्य करने का स्थान है। किसी अन्य उद्योग की तरह, इसके कामगार भी संघ के सदस्य हैं। उदाहरण के लिए नर्तक, जोखिम के कार्य करने वाले कलाकार एवं अतिरिक्त कलाकार कनिष्ठ कलाकार संघ (जूनियर आर्टिस्ट एसोसिएशन) के सदस्य होते हैं। उनकी माँग है कि आठ घंटे की शिफ्ट हो, मेहनताना वाजिब हो और कार्यावस्था सुरक्षित हो। इस उद्योग के उत्पादनों का विज्ञापन एवं बाज़ार में जाना फ़िल्म वितरक के द्वारा, एवं सिनेमा हॉल मालिकों अथवा संगीत के कैसेट्स एवं वीडियोज बेचने वाली दुकानों के द्वारा होता है। और इस उद्योग में कार्य करने वाले लोग, किसी अन्य उद्योग की तरह उसी शहर में रहते हैं, लेकिन शहर में उनके द्वारा किए गए विभिन्न कार्य, वे लोग कौन हैं और कितना कमाते हैं, पर निर्भर करता है। फ़िल्मी सितारे और कपड़ा मिलों के मालिक जुहू जैसे स्थानों पर रहते हैं, जबकि अतिरिक्त कलाकार और कपड़ा मिल के मजदूर गोरेगाँव जैसी जगहों पर रहते हैं। कुछ पाँच सितारा होटलों में जाते हैं और जापान का सुशी (Sushi) जैसा खाना खाते हैं जबकि कुछ स्थानीय हाथगाड़ियों पर वड़ा पाव खाते हैं। मुंबई के लोगों को कहाँ वे रहते हैं, क्या वे खाते हैं और कितने कीमती कपड़े पहनते हैं के आधार पर विभाजित किया जाता है। परंतु कुछ सामान्य बातें या वस्तुएँ जो शहर उन्हें देता है के आधार पर वे समान (संगठित) भी है–वे एक जैसी फ़िल्में और क्रिकेट मैच देखते हैं, वे समान वायु प्रदूषित वातावरण में आवागमन करते हैं, और उन सबकी आकाँक्षा होती है कि उनके बच्चे अच्छा काम करें।

लोग कहाँ और कैसा कार्य करते हैं वे किस तरह का व्यवसाय करते हैं यह सब उनकी पहचान का महत्वपूर्ण हिस्सा होता है। इस अध्याय में हम देखेंगे कि प्रौद्योगिकी में होने वाले परिवर्तन और लोग किस प्रकार का कार्य करते हैं जिससे भारत में सामाजिक संबंधों में परिवर्तन आता है। दूसरी तरफ़, सामाजिक संस्थाएँ जैसे जाति, नातेदारी का संजाल, लिंग एवं क्षेत्र भी, कार्य को संगठित करने के तरीके अथवा उत्पाद को बाज़ार में भेजने के तरीके को प्रभावित करते हैं। यह समाजशास्त्रियों के लिए शोध का एक बड़ा क्षेत्र है।

उदाहरण के लिए हम महिलाओं को कुछ अन्य क्षेत्रों जैसे इंजीनियरिंग की बजाय नर्सिंग अथवा शिक्षण के कार्यों में अधिक क्यों पाते हैं? यह मात्र एक संयोग है अथवा इसके पीछे समाज की यह सोच है कि महिलाएँ देखभाल एवं पालन पोषण के क्षेत्र के लिए अधिक उपयुक्त हैं। बनिस्बत उन कार्यों के जो 'सख्त' और 'पुरुषोचित' नजर आते हैं! जबकि नर्सिंग के कार्य में एक पुल को डिजाइन करने से अधिक बल की आवश्यकता होती है। अगर अधिक महिलाएँ इंजीनियरिंग के क्षेत्र में जाती हैं तो वे इस व्यवसाय को कैसे प्रभावित करती हैं? अपने आप से पूछिए कि क्यों भारत में कॉफी के विज्ञापन में पैकेट पर दो कप दिखाए जाते हैं जबकि अमेरिका में एक कप? इसका उत्तर यह है कि बहुत से भारतीय कॉफी पीने को सामाजिकता निभाने का एक अवसर मानते हैं जबकि अमेरिका में कॉफी पीना सवेरे उठकर स्फूर्ति लाने वाले पेय को पीने जैसा है। समाजशास्त्री इन प्रश्नों में रुचि रखते हैं कि कौन क्या उत्पादित करता है, कौन कहाँ कार्य करता है, कौन, किसको और कैसे बेचता है? ये

© NCERT not to be republished

व्यक्तिगत रुचि नहीं है बल्कि सामाजिक प्रारूपों का नतीजा है। इसके विपरीत लोगों की रुचियाँ यह समझाने में कि सामाजिक कार्य कैसे होते हैं से प्रभावित होती हैं।

5.1 औद्योगिक समाज की कल्पना

समाजशास्त्र के अनेकों महत्वपूर्ण कार्य तब किए गए थे जबकि औद्योगीकरण एक नयी अवधारणा था और मशीनों ने एक महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण किया हुआ था। कार्ल मार्क्स, वेबर और एमील दुर्खाइम जैसे विचारकों ने उद्योग की बहुत सी नयी संकल्पनाओं से स्वयं को जोड़ा। ये थी नगरीकरण जिसने आमने-सामने के संबंध को बदला जोकि ग्रामीण समाजों में पाए जाते थे। जहाँ कि लोग अपने या जान पहचान के भूस्वामियों के खेतों में काम करते थे, उन संबंधों का स्थान आधुनिक कारखानों एवं कार्यस्थलों के अज्ञात व्यावसायिक संबंधों ने ले लिया। औद्योगीकरण से एक विस्तृत श्रम विभाजन होता है। लोग अधिकतर अपने कार्यों का अंतिम रूप नहीं देख पाते क्योंकि उन्हें उत्पादन के एक छोटे से पुर्जे को बनाना होता है। अक्सर यह कार्य दोहराने और थकाने वाला होता है, लेकिन फिर भी बेरोजगार होने से यह स्थिति अच्छी है। मार्क्स ने इस स्थिति को 'अलगाव' कहा, जिसमें लोग अपने कार्य से प्रसन्न नहीं होते, उनकी उत्तरजीविता भी इस बात पर निर्भर करती है कि मशीनें मानवीय श्रम के लिए कितना स्थान छोड़ती हैं।

औद्योगीकरण कुछ एक स्थानों पर जबरदस्त समानता लाता है उदाहरण के लिए रेलगाड़ियों, बसों और साइबर कैफे में जातीय भेदभाव के महत्त्व का ना होना। दूसरी तरफ़, भेदभाव के पुराने स्वरूपों को नए कारखानों और कार्यस्थलों में अभी भी देखा जा सकता है। हालाँकि, इस संसार में सामाजिक असमानताएँ कम हो रही हैं लेकिन आर्थिक या आय से संबंधित असमानताएँ उत्पन्न हो रही हैं। बहुधा-सामाजिक और आय संबंधी असमानता परस्पर आच्छादित हो जाती है। उदाहरण के लिए अच्छे वेतन वाले व्यवसायों जैसे मेडीसिन, कानून अथवा पत्रकारिता में उच्च जाति के लोगों का वर्चस्व आज भी बना हुआ है। महिलाएँ (अधिकांशत:) समान कार्य के लिए कम वेतन पाती हैं।

कुछ समय से समाजशास्त्रियों ने औद्योगीकरण को सकारात्मक और नकारात्मक दोनों रूपों में देखा है, आधुनिकीकरण के सिद्धांत के प्रभाव से 20वीं शताब्दी के मध्य से औद्योगीकरण अपरिहार्य एवं सकारात्मक रूप में दिखाई दे रहा है। आधुनीकीकरण का सिद्धांत यह तर्क देता है कि आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में पृथक् समाज की अवस्थाएँ अलग-अलग हैं परंतु उन सभी की दिशा एक ही है। इन सिद्धांतकारों के अनुसार आधुनिक समाज पश्चिम का प्रतिनिधित्व कर रहा है।

क्रियाकलाप 5.1

अभिसरण शोध *जिसे कि आधुनिकीकरण के सिद्धांतकारों क्लार्क ने आगे बढ़ाया के अनुसार 21वीं शताब्दी का आधुनिकीकृत भारत 19वीं शताब्दी की विशेषताओं से साझा करने के बजाय उनकी अधिक विशेषताएँ 21वीं शताब्दी के चीन या संयुक्त राज्यों जैसी होंगी। क्या आपको यह सच लगता है? क्या संस्कृति, भाषा एवं परंपराएँ नयी तकनीक के कारण विलुप्त हो जाती हैं, और क्या संस्कृति नए उत्पादों को अपनाने के तरीके को प्रभावित करती है? इन बिंदुओं पर अपने स्वयं के विचारों को उदाहरण देते हुए लिखिए।*

5.2 भारत में औद्योगीकरण

भारतीय औद्योगीकरण की विशिष्टताएँ

भारत में औद्योगीकरण से होने वाले अनुभव कई प्रकारों से पाश्चात्य प्रतिमान से समान और कई प्रकारों से भिन्न थे। विभिन्न देशों के बीच किए गए तुलनात्मक विश्लेषण यह सुझाते हैं कि औद्योगीकरण पूँजीवाद

© NCERT not to be republished

का कोई आदर्श प्रतिमान नहीं है। चलिए अब हम, इसे भिन्नताओं के बिंदु से प्रारंभ करते हैं, इसे लोगों के कार्य करने के तरीके से संबद्ध करते हैं। विकसित देशों में जनसंख्या का एक बड़ा भाग नौकरी पेशा लोगों का होता है, उसके बाद उद्योगों में और 10% से कम कृषि कार्यों में लगे होते हैं (आई.एल.ओ के आँकड़े) 1999–2000 में भारत में लगभग 60% लोग प्राथमिक क्षेत्र (कृषि एवं खदान) 17% लोग द्वितीयक क्षेत्र (उत्पादन, निर्माण और उपयोगिता) और 23% लोग तृतीयक क्षेत्र (व्यापार, यातायात, वित्तीय सेवाएँ इत्यादि) में कार्यरत थे। फिर भी, अगर हम इन क्षेत्रों की आर्थिक वृद्धि को देखें तो कृषि कार्यों के हिस्से में तेज़ी से ह्रास हुआ और इस क्षेत्र में होने वाले कार्य लगभग आधे से अधिक हो गए। यह स्थिति बहुत ही गंभीर है क्योंकि इसका अर्थ यह हुआ कि जिस क्षेत्र में लोग ज़्यादा कार्यरत हैं वह उन्हें अधिक आमदनी देने में सक्षम नहीं हैं (भारत सरकार, आर्थिक सर्वेक्षण 2001–02)। भारत में 2006–07 में रोजगार के विभिन्न क्षेत्रों के हिस्से इस प्रकार थे– कृषि में 15.19%, खदान एवं खनन में 0.61%, उत्पादन में 13.33%, निर्माण में 6.10%, व्यापार, होटल एवं रेस्त्रां में 13.18%, यातायात भंडारण एवं संचार में 5.06%, सामुदायिक, सामाजिक एवं व्यक्तिगत सेवाओं में 8.97%, वित्तीय बीमा, रीयल इस्टेट एवं व्यावसायिक सेवाओं में 2.22% तथा बिजली और पानी में 0.33% था। (स्रोत: योजना आयोग 11वीं पंचवर्षीय योजना, 2007–12, वोल्यूम I, पृष्ठ 66)

रोजगार के आधार पर कामगारों के वितरण का प्रतिशत–स्व रोजगार, नियमित और अनियमित कामगार–विभिन्न वर्षों में ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में।

	वर्ष			
	1993–94	1999–2000	2004–05	2009–10
ग्रामीण				
स्व–रोजगार	58.0	55.8	60.2	54.2
सभी दिहाड़ी कामगार	42.0	44.2	39.9	45.9
नियमित	6.5	6.8	7.1	7.3
अनियमित	35.6	37.4	32.8	38.6
नगरीय				
स्व–रोजगार	42.3	42.2	45.4	41.1
सभी दिहाड़ी कामगार	57.7	57.8	54.5	58.9
नियमित	39.4	40.0	39.5	41.4
अनियमित	18.3	17.7	15.0	17.5

स्रोत : सेकण्ड एनुअल रिपोर्ट टू द पीपुल ऑन एम्प्लॉयमेन्ट – 2011

विकसित और विकासशील देशों में एक और बड़ा अंतर नियमित वेतनभोगी कार्यरत लोगों की संख्या का होना है। विकसित देशों में औपचारिक रूप से कार्यरत लोग बहुसंख्यक हैं। भारत में 50% से अधिक लोग स्व–रोजगारी हैं, केवल 14% लोग नियमित वेतनभोगी रोजगार में हैं, जबकि लगभग 30% लोग अनियमित मजदूर हैं (अनंत 2005:239) यहां दी गई तालिका में 2004–05 से 2009–10 तक ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में होने वाले परिवर्तनों को दर्शाया गया है।

अर्थशास्त्रियों एवं अन्यों ने अक्सर संगठित या औपचारिक और असंगठित या अनौपचारिक क्षेत्रों के मध्य अंतर स्थापित किया है। इस बात पर मतभेद है कि इन क्षेत्रों को परिभाषित कैसे किया जाए। एक परिभाषा के अनुसार संगठित क्षेत्र की इकाई में 10 और अधिक लोगों के पूरे वर्ष रोजगार में रहने से इन क्षेत्रों का गठन होता है। सरकारी तौर पर इनका पंजीकरण होना चाहिए ताकि कर्मचारियों को उपयुक्त वेतन या मजदूरी, पेंशन और अन्य सुविधाएँ मिलना सुनिश्चित हो सकें। भारत में 90% से अधिक कार्य चाहे वह कृषि, उद्योग अथवा नौकरी हो, असंगठित या अनौपचारिक क्षेत्र में आते हैं। संगठित क्षेत्र के इतना छोटा होने का सामाजिक आशय क्या है?

इसका पहला अर्थ यह है कि बहुत कम लोग बड़ी फर्मों में रोजगार करते हैं जहाँ कि वे दूसरे क्षेत्रों और पृष्ठभूमि वाले लोगों से मिल पाते हैं। नगरीय क्षेत्र इस प्रकार के कुछ मौके दे पाता है–नगरीय क्षेत्र में आपका पड़ोसी भिन्न क्षेत्र का हो सकता है–मोटे तौर पर, अधिकतर भारतीय लोग छोटे पैमाने पर कार्य कर रहे स्थानों पर ही काम करते हैं। यहाँ कार्य के कई पक्षों का निर्धारण वैयक्तिक संबंधों से होता है। अगर नियोजक आपको पसंद करता है, तो आपका वेतन बढ़ सकता है, अगर आप उसके साथ झगड़ा

© NCERT not to be republished

करते हैं तो आप अपना रोजगार भी गँवा सकते हैं। बड़े संस्थानों में ऐसा नहीं होता वहाँ कार्य के निश्चित नियम होते हैं, वहाँ नियुक्ति अधिक पारदर्शी होती है और अगर आपके अपने ऊँचे पदाधिकारी से कुछ मतभेद होते हैं तो उसकी शिकायत और क्षतिपूर्ति की निश्चित कार्यविधियाँ होती हैं। दूसरे, बहुत ही कम भारतीय सुरक्षित और लाभदायक नौकरियों में प्रवेश करते हैं। जो वहाँ हैं उनमें भी दो-तिहाई सरकारी नौकरी करते हैं। इसीलिए सरकारी नौकरियाँ लोकप्रिय हैं। बचे हुए लोग बुढ़ापे में अपने बच्चों पर आश्रित होने के लिए बाध्य हैं। जाति, धर्म तथा क्षेत्र की दीवारों को पार करने में सरकारी नौकरियों की महत्वपूर्ण भूमिका है। एक समाजशास्त्री तर्क देते हुए उन कारणों की चर्चा करते हैं कि भिलाई स्टील प्लांट में सांप्रदायिक दंगे क्यों नहीं होते हैं? कारण यह है कि वहाँ भारत के सभी भागों के लोग एक साथ काम करते हैं। तीसरे, बहुत ही कम लोग संघ के सदस्य हैं, जो कि सुरक्षित क्षेत्र की विशेषता है, वे एकत्रित होकर सामूहिक रूप से अपने उपयुक्त वेतन और सुरक्षित कार्यावस्था के लिए लड़ने का अनुभव नहीं रखते। सरकार ने अब असंगठित क्षेत्रों की अवस्था पर निगरानी रखने के लिए नियम बनाए हैं, लेकिन वहाँ भी कार्यान्विति में नियोजक अथवा ठेकेदार की मनमर्जी ही प्रभावी होती है।

भारत में स्वतंत्रता के प्रारंभिक वर्षों में औद्योगीकरण

रूई, जूट, कोयला खानें एवं रेलवे भारत के प्रथम आधुनिक उद्योग थे। स्वतंत्रता के बाद सरकार ने आर्थिकी को 'प्रभावशाली ऊँचाइयों' पर रखा। इसमें सुरक्षा, परिवहन एवं संचार, ऊर्जा खनन एवं अन्य परियोजनाओं को शामिल किया गया जिन्हें करने के लिए सरकार ही सक्षम थी और यह निजी उद्योगों के फलने-फूलने के लिए भी आवश्यक था। भारत की मिश्रित आर्थिक नीति में कुछ क्षेत्र सरकार के लिए आरक्षित थे जबकि कुछ निजी क्षेत्रों के लिए खुले थे। लेकिन उसमें भी सरकार अपनी अनुज्ञप्ति (लाइसेंसिंग) नीति के द्वारा यह सुनिश्चित करने का प्रयास करती है कि ये उद्योग विभिन्न भागों में फैले हुए हों। स्वतंत्रता के पहले उद्योग मुख्यत: बंदरगाह वाले शहरों जैसे मद्रास, बंबई एवं कलकत्ता (चेन्नई, मुंबई एवं कोलकाता) तक ही सीमित थे। लेकिन उसके बाद अन्य स्थान जैसे बड़ौदा, (बड़ोदरा) कोयंबटूर, बैंगलोर (बंगलूरु), पूना, फरीदाबाद एवं राजकोट भी महत्वपूर्ण औद्योगिक क्षेत्र बन गए। सरकार अन्य छोटे-पैमाने के उद्योगों को भी विशिष्ट प्रोत्साहन एवं सहायता देकर प्रोत्साहित करने का प्रयास कर रही है। बहुत सी वस्तुएँ (मदों) जैसे कागज़ एवं लकड़ी के सामान, लेखन सामग्री, शीशा एवं चीनी मिट्टी जैसे छोटे-पैमाने के क्षेत्रों के लिए आरक्षित थे। 1991 तक कुल कार्यकारी जनसंख्या में से केवल 28% बड़े उद्योगों में नौकरी कर रहे थे, जबकि 72% लोग छोटे-पैमाने के एवं परंपरागत उद्योगों में कार्यरत थे (रॉय 2001:11)

भूमंडलीकरण, उदारीकरण एवं भारतीय उद्योगों में परिवर्तन

सन् 1990 के दशक से सरकार ने उदारीकरण की नीति को अपनाया है। निजी कंपनियाँ, विशेष रूप से विदेशी फर्मों को उन क्षेत्रों में निवेश करने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है जिन्हें पहले ये सरकार के लिए, जैसे दूरसंचार, नागरिक उड्डयन एवं ऊर्जा आदि के लिए आरक्षित थे। उद्योगों को खोलने के लिए अनुज्ञप्ति (लाइसेंस) वांछित नहीं है। अब भारतीय दुकानों पर विदेशी वस्तुएँ आसानी से उपलब्ध हो जाती हैं। उदारीकरण के परिणामस्वरूप बहुत सी भारतीय कंपनियों को बहुदेशीय कंपनियों ने खरीद लिया है। साथ ही साथ कुछ भारतीय कंपनियाँ बहुदेशीय कंपनियाँ बन गई हैं। इसका पहला उदाहरण है जब पारले पेय को कोका कोला ने खरीदा। पारले पेय की सालाना आमदनी 250 करोड़ रुपये थी, जबकि कोका कोला का विज्ञापन बजट 400 करोड़ रुपये है। विज्ञापन का यह स्तर स्वाभाविक रूप से उपभोग को बढ़ा देता

© NCERT not to be republished

है, परंपरागत कोका कोला ने आज कई भारतीय पेयों का स्थान ले लिया है। उदारीकरण का दूसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र खुदरा व्यापार हो सकता है। आपके विचार से क्या भारतीय, भारतीय डिपार्टमेंटल स्टोर (भारतीय बहुविभागीय भंडारों) से खरीदारी करने को वरीयता देते हैं, अथवा वे व्यापार के लिए बाहर जाते हैं?

बॉक्स 5.1

भारतीय बाज़ार में खुदरा व्यापारियों की घुसपैठ

इस समय भारत के खुदरा व्यापार क्षेत्र की नीति प्रवेश के लिए एकदम अनुकूल होने के कारण दुनिया भर के बड़े-से-बड़े व्यापार समूह जिनमें वॉलमार्ट स्टोर्स, कैरेफोर और टेस्को शमिल हैं, इस देश में प्रवेश के लिए आतुर रहे हैं। जबकि विदेशियों द्वारा बाज़ार में प्रत्यक्ष पूँजी-निवेश पर सरकार की ओर से प्रतिबंध लगा हुआ है। रिलायंस इंडस्ट्रीज और भारतीय एयरटेल जैसे बड़े-बड़े भारतीय व्यावसायिक समूहों द्वारा हाल में भारी पूँजी-निवेश किया गया है जिसकी वजह से इन विदेशी खुदरा व्यापारियों द्वारा भी जल्दी से जल्दी निवेश करने की आवश्यकता महसूस की जा रही है। गत सप्ताह भारतीय एयरटेल ने यह संकेत दिया कि वॉलमार्ट, कैरेफोर और टेस्को के बीच हुए वार्तालापों के दौरान यह पता चला कि वे भी खुदरा क्षेत्र में संयुक्त उद्यम लगाने की बात सोच रहे हैं। भारत का खुदरा क्षेत्र यहाँ की तीव्र संवृद्धि के कारण ही आकर्षक नहीं बन गया है बल्कि इसलिए भी कि वहाँ संपूर्ण राष्ट्र का 97 प्रतिशत व्यवसाय परिवारों द्वारा संचालित नुक्कड़ दुकानों के जरिए चलाया जा रहा है। लेकिन उद्यमों की इस विशेषता को देखते हुए सरकार विदेशियों को बाज़ार में प्रवेश करने से क्यों रोक रही है? राजनीतिक लोग अक्सर यह दलील देते हैं कि भूमंडलीय खुदरा व्यापारी हजारों छोटे स्थानीय तथा घरेलू व्यापारियों की शृंखला और हाल में उभर रहे स्वदेशी खुदरा व्यापार समूहों को बर्बाद कर देंगे।

स्रोत : इंटरनेशनल हैराल्ड ट्रिब्यून, 3 अगस्त 2006

सरकार सार्वजनिक कंपनियों के अपने हिस्सों को निजी क्षेत्र की कंपनियों को बेचने का प्रयास कर रही है, जिसे विनिवेश कहा जाता है। कई सरकारी कर्मचारी इससे भयभीत हैं कि कहीं विनिवेश के कारण उनकी नौकरी न चली जाए। मार्डन फूड जिसे सरकार ने स्वास्थ्यवर्धक सस्ता खाना उपलब्ध कराने के लिए बनाया था, और वह निजीकरण को जाने वाली पहली कंपनी थी, ने 60% कर्मचारियों को पहले पाँच वर्षों में जबरन सेवामुक्त कर दिया।

अब हम देखते हैं कि यह नियम किस तरह विश्वव्यापी प्रवृत्ति बन गया। अधिकांश कंपनियों ने अपने स्थायी कर्मचारियों की संख्या में कटौती कर दी, वे अपने कार्य बाह्यस्रोतों जैसे छोटी कंपनी से यहाँ तक कि घरों से भी करवाने लगे। बहुदेशीय कंपनियाँ पूरे विश्व में बाह्यस्रोतों से काम करवाती हैं, विकासशील देशों जैसे भारत से उन्हें सस्ते मजदूर उपलब्ध हो जाते हैं। क्योंकि छोटी कंपनियों को बड़ी कंपनियों से कार्य प्राप्त करने के लिए स्पर्धा करनी होती है अत: वे कामगारों को कम वेतन देते हैं और कार्यावस्था भी अधिकतर खराब होती है। छोटी फर्मों में मजदूर संगठनों का गठन भी मुश्किल होता है। अधिकांश कंपनियाँ, यहाँ तक कि सरकार भी अब बाह्यस्रोतों और अनुबंध पर काम करवाने लगी है। लेकिन यह प्रवृत्ति निजी क्षेत्रों में विशेष रूप से दिखाई देती है।

सारांश में, भारत अभी भी एक कृषि प्रधान देश है। सेवा क्षेत्र- दुकानें, बैंक, आई.टी. उद्योग, होटल्स, और अन्य सेवाओं के क्षेत्र में, अधिक लोग आ रहे हैं और नगरीय मध्यवर्ग की संख्या भी बढ़ रही है, नगरीय मध्यवर्ग के साथ वे मूल्य जो टेलीविजन सीरियलों और फ़िल्मों में दिखाई देते हैं भी बढ़ रहे हैं। परंतु हम यह भी देखते हैं कि भारत में बहुत कम लोगों के पास सुरक्षित रोजगार हैं, यहाँ तक कि छोटी संख्या के स्थायी सुरक्षित रोजगार भी अनुबंधित कामगारों के कारण असुरक्षित होते जा रहे हैं। अब तक सरकारी रोजगार ही जनसंख्या के अधिकांश लोगों का कल्याण करने का एक बड़ा मार्ग था, लेकिन अब

© NCERT not to be republished

वह भी कम होता जा रहा है। कुछ अर्थशास्त्रियों ने इस पर विचार विमर्श भी किया लेकिन विश्वव्यापी उदारीकरण एवं निजीकरण के साथ आमदनी की असमानताएँ भी बढ़ रही हैं। आपको इस विषय पर अधिक जानकारी भूमंडलीकरण के अगले अध्याय में पढ़ने को मिलेगी।

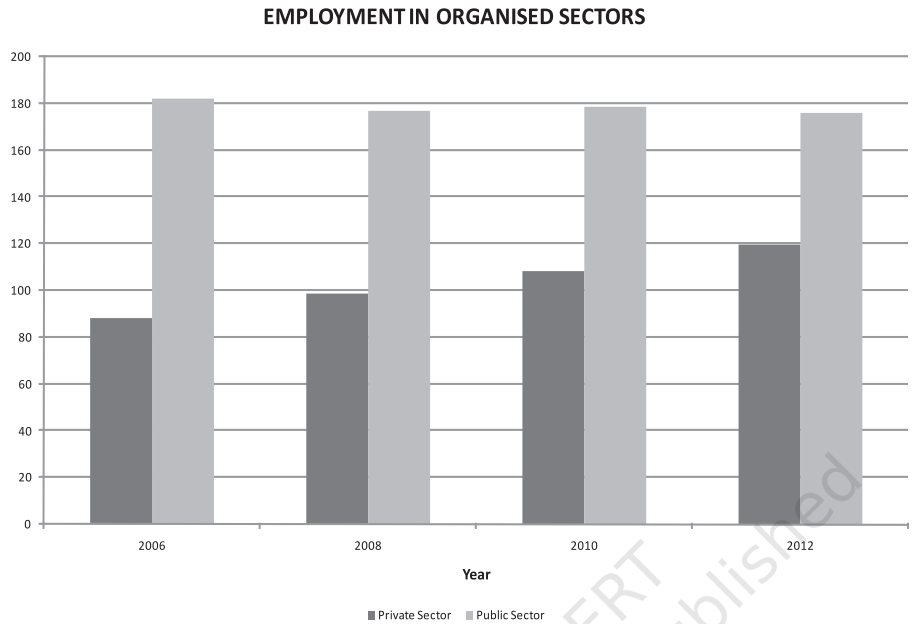

साथ ही बड़े उद्योगों में भी सुरक्षित रोजगार कम होता जा रहा है, सरकार ने भी उद्योग लगाने के लिए भूमि अधिग्रहण की नीति प्रारंभ की है। ये उद्योग आस-पास के क्षेत्र के लोगों को रोजगार नहीं दिलवाते हैं बल्कि ये वहाँ जबरदस्त प्रदूषण फैलाते हैं। बहुत से किसानों जिनमें मुख्य रूप से आदिवासी शामिल हैं, कुल विस्थापितों में ये करीब 40% हैं ने क्षतिपूर्ति की कम दर के लिए विरोध किया और इन्हें जबरन दिहाड़ी मजदूर बनना पड़ा और उन्हें बड़े शहरों के फुटपाथ पर काम करते देखा जा सकता है। आप अध्याय 3 में दी गई हितों की प्रतियोगिता की परिचर्चा को याद कीजिए।

अगले भाग में हम देखते हैं कि लोग किस तरह काम पाते हैं, वे वास्तव में अपने कार्यस्थल पर क्या करते हैं और किस तरह की कार्यावस्था से रू-ब-रू होते हैं?

5.3 लोग काम किस तरह पाते हैं

अगर आप बुधवार सुबह का *टाइम्स ऑफ़ इंडिया* देखेंगे तो उसमें 'टाइम्स एसेन्ट' के नाम से एक विशिष्ट पृष्ठ पाएँगे, यहाँ रोज़गार के विज्ञापन होते हैं, और अपने आप से अथवा अपने कामगार से अच्छा काम लेने के लिए प्रेरित करने के सुझाव होते हैं।

बॉक्स सं. 5.2 सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरियों का एक उदाहरण है। काम पाने वाले व्यक्ति को अन्य लाभ जैसे मकान किराया भत्ता भी मिलता है। कार्य के लिए वांछित योग्यताएँ बहुत विस्तार से वर्णित होती हैं। ऐसे कार्यों में पदोन्नति के प्रावधान होते हैं और आपकी वरिष्ठता को भी स्वीकारा और महत्त्व दिया जाता है।

अब हम **बॉक्स सं. 5.3** में निजी क्षेत्र की नौकरियों के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। यह भी एक नियमित वेतन वाली नौकरी है, यह एक जाने माने होटल की नौकरी है। लेकिन यहाँ वेतन एवं जरूरी

© NCERT not to be republished

बॉक्स 5.2

दयाल सिंह महाविद्यालय
(दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा संचालित कॉलेज)
लोधी रोड, नयी दिल्ली-110003

प्राचार्य के पद के लिए प्रार्थना पत्र आमंत्रित किए जाते हैं वेतनमान रु.16400-22400 है (कम से कम रुपये 17,300 प्रतिमाह) डी.ए; सी.सी.ए, एच.आर.ए., टी.ए. एवं अन्य लाभों के साथ, यह दिल्ली विश्वविद्यालय के नियमानुसार होगा।

योग्यता

(i) संबद्ध विषय में कम से कम 55 प्रतिशत अंक अथवा बी ग्रेड के समकक्ष सहित स्नातकोत्तर उपाधि ग्रेड पैमाने के अनुसार बी, ग्रेड सात सूत्रीय पैमाने जैसे ओ, ए, बी, सी, डी, ई, और एफ है।

(ii) पीएच.डी. अथवा समकक्ष उपाधि

(iii) कुल 15 वर्ष का पढ़ाने का अनुभव और/अथवा विश्वविद्यालय/महाविद्यालय अथवा अन्य समकक्ष संस्थान से पोस्ट डॉक्टोरल शोध कार्य

प्रार्थना पत्र में योग्यता, अनुभव, उम्र इत्यादि का पूरा विवरण दें तथा पुष्टि करने वाले सभी दस्तावेजों के साथ अध्यक्ष, शासी निकाय, दयाल सिंह कॉलेज, लोधी रोड, नयी दिल्ली 110003 में इस विज्ञप्ति के जारी होने के 15 दिन के अंदर मुहरबंद लिफाफे में पहुँचना चाहिए।

चेयरमेन
शासी निकाय (गवरनिंग बॉडी)

बॉक्स 5.3

रैडिसन होटल, दिल्ली
जल्द ही अपना निष्ठावान कार्यक्रम शुरू कर रहा है

ग्राहक सेवा संचालक
वरिष्ठ टेली-विक्रय संचालक

प्रत्याशी को अंग्रेज़ी भाषा पर अच्छी पकड़ हो बेचने की सहज संवृद्धि वाले आवेदन करें, पिछला अनुभव अधिमान्य

हम एक पाँच सितारा कार्य माहौल प्रस्तावित करते हैं, अविरत विकास एवं प्रशिक्षण, प्रेरणास्पद वातावरण, दिन का काम और अच्छा वेतन/प्रोत्साहन अंश कालिक एवं पूर्णकालिक विकल्प उपलब्ध।

30 अगस्त से 1 सितंबर 2006 प्रात: 9.30 से सायंकाल 6.30 तक फ़ोन करें
फ़ोन : 66407361/66407351/66407353
अथवा अपना सी वी फैक्स करें 26779062
अथवा ई मेल करें-
memberhelpdesk@radissondel.com.

रैडीसन

योग्यताएँ लचीली हैं, और यह एक अनुबंध की तरह का काम है। साथ में दिए गए विज्ञापन में दी गई भाषा को जरा देखिए। जैसे एक निष्ठावान कार्यक्रम की तरह। प्रत्येक संगठन अपने स्वयं के नियमों के अनुसार कार्य करने का प्रयास करता है।

लेकिन बहुत कम अनुपात में लोग विज्ञापन या रोजगार कार्यालय के द्वारा नौकरी प्राप्त कर पाते हैं। वे लोग जो स्वनियोजित हैं जैसे-नलसाज, बिजली मिस्त्री और बढ़ई (खाती या तरखान) एक तरफ़ हैं और निजी ट्यूशन देने वाले अध्यापक, वास्तुकार और स्वतंत्र रूप से काम करने वाले छाया चित्रकार, दूसरी तरफ़ हैं, इन सभी की कार्य अवधि इनके निजी संपर्कों पर निर्भर रहती है। वे सोचते हैं कि उनका काम ही उनका विज्ञापन है। मोबाइल फ़ोन ने नलसाजों एवं अन्य ऐसे लोगों की जिंदगी को अधिक सरल बना दिया है, अब वे ज़्यादा लोगों के लिए कार्य कर सकते हैं।

एक फ़ैक्ट्री के कामगारों को रोज़गार देने का तरीका भिन्न होता है। पहले बहुत से कामगार ठेकेदार या काम देने वालों से रोज़गार पाते थे। कानपुर कपड़ा मिल में रोज़गार दिलाने वाले को मिस्त्री बोलते थे, और वे खुद भी वहाँ काम करते थे। वे समान क्षेत्रों या समुदायों से मजदूर की तरह आते थे, परंतु मालिक उन पर कृपालु होते थे अत: वे सब कामगारों के मुखिया बन जाते थे। दूसरी तरफ़ मिस्त्री निजी कामगारों पर समुदाय संबंधी दबाव डालता था। आजकल काम दिलाने वाले का महत्त्व कम हो गया है और कार्यकारिणी तथा यूनियन दोनों ही अपने लोगों को काम दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते

© NCERT not to be republished

हैं। कुछ कामगार यह भी चाहते हैं कि उनका काम उनके बच्चों को दे दिया जाए। बहुत सी फ़ैक्ट्रियों में बदली कामगार भी होते हैं, जो कि छुट्टी पर गए हुए मजदूरों के स्थान पर काम करते हैं। बहुत से बदली कामगार एक ही कंपनी में बहुत लंबे समय से काम कर रहे होते हैं किंतु उन्हें सबके समान स्थायी पद और सुरक्षा नहीं दी जाती है। इसे संगठित क्षेत्र में अनुबंधित कार्य कहते हैं। रोजगार के अवसरों में दो तत्व शामिल होते हैं:-

(i) किसी संगठन में रोजगार

(ii) स्व-रोजगार

भारत सरकार के कार्यक्रम "स्टैंड अप इंडिया" कार्यक्रम तथा "मेक इन इंडिया" कार्यक्रम वे नीतिगत प्रयास हैं जो रोजगार एवं स्वरोजगार को संभव बनाते हैं। इन प्रयासों से हाशिये पर खड़े हुए लोग जैसे अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं महिलाएं भी रोजगार के अवसरों का लाभ उठा रहे हैं। इन सकारात्मक प्रयासों ने भारत के युवाओं जिन्हें जनांकिकीय डिविडैंट भी कहा जाता है को विकास की प्रक्रिया से जोड़ दिया गया।

हालाँकि, दिहाड़ी मजदूरों के काम की ठेकेदारी व्यवस्था ज़्यादातर भवन-निर्माण कार्य के स्थान पर या ईंटे बनाने के स्थान आदि पर दिखाई देती है। ठेकेदार गाँव जाता है और वहाँ काम चाहने वालों से इसके बारे में पूछता है। वह उन्हें कुछ पैसा उधार भी देता है, उधार दिए गए पैसे में काम के स्थान तक आने के यातायात का पैसा होता है। उधार पैसा अग्रिम दिहाड़ी माना जाता है, और जब तक उधार नहीं चुक जाता वह बिना पैसे के काम करता है। पहले कृषि मजदूर अपने कर्जे के बदले जमींदार के पास बंधुआ मजदूर की तरह रहते थे। अब उद्योगों में अनियत कामगार के रूप में जाते हैं, हालाँकि वे अभी भी कर्ज़दार हैं, परंतु वे अनुबंधक के अन्य सामाजिक दायित्वों से बँधे हुए नहीं होते हैं। इस अर्थ में, वे औद्योगिक समाज में अधिक मुक्त हैं। वे अनुबंध को तोड़कर किसी और के यहाँ काम ढूँढ़ सकते हैं। कभी-कभी पूरा परिवार प्रवसन कर जाता है और बच्चे काम में अपने माता पिता की सहायता करते हैं।

बॉक्स 5.4

दक्षिण गुजरात के ईंट के भट्टों में मजदूरों के दल

दक्षिणी गुजरात में ईंट के बाड़े में काम होने के मौसम में लगभग 30 से 40 हज़ार कामगार कार्य करते हैं। ईंट के भट्टों के मालिक ऊँची जाति के लोग जैसे पारसी या देसाई होते हैं। प्रजापति, जाति के लोग इन ईंट के बाड़े पर अपना पारंपरिक मिट्टी का कार्य करते हैं। कामगार अधिकांशत: स्थानीय या प्रवासी दलित होते हैं। उन्हें ठेकेदार के द्वारा रोज़गार पर रखा जाता है और ये 9 से 11 सदस्यों की टोली में काम करते हैं। पुरुष मिट्टी को सानते और उसे ईंट का आकार देते हैं तथा छोटे बच्चे उन्हें सुखाने के स्थान पर ले जाते हैं। महिलाओं और लड़कियों की एक टोली ईंटों को भट्टों पर ले जाती हैं जहाँ पुरुष उन्हें पकाते हैं, और फिर से उन्हें ट्रकों पर लाद दिया जाता है।

प्रत्येक टोली रोज़ाना 2500 से 3000 ईंटे बना लेती है। जल्दी काम करने वाला समूह 10 घंटे में और धीमे काम करने वाला 14 घंटे में अपना काम खत्म करता है। 6 वर्ष की उम्र से बच्चे पिता द्वारा बनाई गई ताज़ा ईंटों को रात में उठाने का काम करते हैं। गीली ईंटों का वजन लगभग 3 किलो होता है। रात के अँधेरे में छोटे बच्चे एक-एक ईंट को आधार पट्टी पर रखने के लिए दौड़ते हैं। जब वे नौ वर्ष के हो जाते हैं तो उन्हें दो ईंटे उठाने की पदोन्नति मिलती है। समाजशास्त्री जान ब्रेमन कहते हैं कि उनके माता-पिता उन्हें रोते हुए उनके बिस्तरों से जगा देते हैं।

© NCERT not to be republished

5.4 काम को किस तरह किया जाता है?

इस भाग में हम यह जानकारी देंगे कि काम को वास्तव में किस तरह किया जाता है। हमारे आसपास हम जिन उत्पादों को देखते हैं उन्हें कैसे बनाया जाता है? एक ऑफिस या फैक्ट्री में मैनेजर और कामगारों के संबंध कैसे होते हैं? भारत में बड़े कार्यस्थलों में संपूर्ण कार्य को स्वत: घर में हो रहे उत्पादन की तरह किया जाता है।

मैनेजर का मुख्य कार्य होता है कामगारों को नियंत्रित रखना और उनसे अधिक काम करवाना। कामगारों से अधिक कार्य करवाने के दो तरीके होते हैं। पहला कार्य के घंटों में वृद्धि। दूसरा निर्धारित दिए गए समय में उत्पादित वस्तु की मात्रा को बढ़ा देना। मशीनें उत्पादन को बढ़ाने में सहायक होती हैं। परंतु ये खतरे भी पैदा करती हैं और अंतत: मशीनें कामगारों का स्थान ले रही हैं। इसीलिए मार्क्स और महात्मा गाँधी दोनों ने मशीनीकरण को रोजगार के लिए खतरा माना।

क्रियाकलाप 5.2

हिंद स्वराज्य में गाँधी जी और मशीन 1924– मैं मशीनों के प्रति पागलपन का विरोधी हूँ, लेकिन मशीनों का विरोधी नहीं हूँ। मैं उस सनक का विरोधी हूँ जो मज़दूरों को कम करती हैं। आदमी श्रम से बचने के लिए मजदूरों को कम करते जाएँगे जबकि हज़ारों मजदूरों को बिना काम के सड़कों पर भूख से मरने के लिए फेंक न दिया जाए। मैं समय और मजदूर दोनों को बचाना चाहता हूँ। मानवजाति के विखंडन के लिए नहीं बल्कि सबके लिए। मैं संपत्ति को कुछ हाथों में एकत्रित नहीं होने देना चाहता, बल्कि उसे सबके हाथों में देखना चाहता हूँ।

1934– एक राष्ट्र के रूप में जब हम चर्खे को अपनाते हैं तो हम न केवल बेरोज़गारी की समस्या का समाधान करते हैं बल्कि यह भी घोषित करते हैं कि हमारी किसी भी राष्ट्र का शोषण करने की इच्छा नहीं है, और हम अमीरों द्वारा गरीबों के शोषण को भी समाप्त करना चाहते हैं।

उदाहरण द्वारा बताइए कि मशीनें किस तरह कामगारों के लिए समस्या पैदा करती हैं? गाँधीजी के दिमाग में क्या विकल्प था? चर्खे को अपनाने से शोषण को कैसे रोका जा सकता है?

स्कूटर का कारखाना

उत्पादन बढ़ाने का दूसरा तरीका है कार्य को संगठित रूप से करना। एक अमेरिकन फ्रैडरिक विनस्लो टेलर ने 1890 में 'वैज्ञानिक प्रबंधन' के नाम से एक व्यवस्था का अविष्कार किया था। इसे 'टेलरिज़्म' या औद्योगिक इंजीनियरिंग (इंडस्ट्रियल इंजीनियरिंग)भी कहा जाता है। इस व्यवस्था के अंतर्गत कार्य को

छोटे से छोटे पुनरावृत्ति तत्वों में तोड़कर कामगारों के मध्य विभाजित करने का प्रावधान था। कामगारों को जितना समय दिया जाता था उसमें उन्हें कार्य को रोज़ाना उतने ही समय में अवश्य समाप्त करना पड़ता था। इसके लिए वे स्टापवाच की सहायता लेते थे। कार्य को तेज़ी से समाप्त करने के लिए एसेंबली लाइन का श्री गणेश हुआ। प्रत्येक कामगार को कन्वेयर बेल्ट के साथ बैठकर अंतिम उत्पाद के केवल एक पुर्जे को उसमें जोड़ना था। कार्य करने की गति को कन्वेयर बेल्ट की गति के साथ व्यवस्थित किया गया। 1980 के दशक में इस तरह का प्रयास किया गया जिसमें प्रत्यक्ष नियंत्रण के स्थान पर अप्रत्यक्ष नियंत्रण की व्यवस्था की गई थी, जहाँ कामगारों को प्रेरित किए जाने का प्रावधान था तथा उन्हें प्रबोधित करने का भी प्रावधान था। परंतु हम कभी-कभी ही इस पुरानी टायलरिज्म प्रक्रिया को बचा हुआ पाते हैं।

भारत का एक सबसे पुराना उद्योग है कपड़ा मिल वहाँ के कामगार अपने आप को मशीन के विस्तार की तरह वर्णित करते हैं। एक पुराना बुनकर रामचंद्र जो कि 1940 में कानपुर कपड़ा मिल में काम करता था कहता है-

> *आपको ऊर्जा की आवश्यकता होती है, आँखे, गर्दन, टाँगे, हाथ और शरीर का प्रत्येक हिस्सा घूमता है। बुनाई के काम में लगातार टकटकी लगानी पड़ती है, आप कहीं नहीं जा सकते, आप का पूरा ध्यान मशीन पर केंद्रित होना चाहिए। जब चार मशीनें चल रही हों तो चारों को चलना चाहिए, उन्हें रुकना नहीं चाहिए (जोशी 2003)*

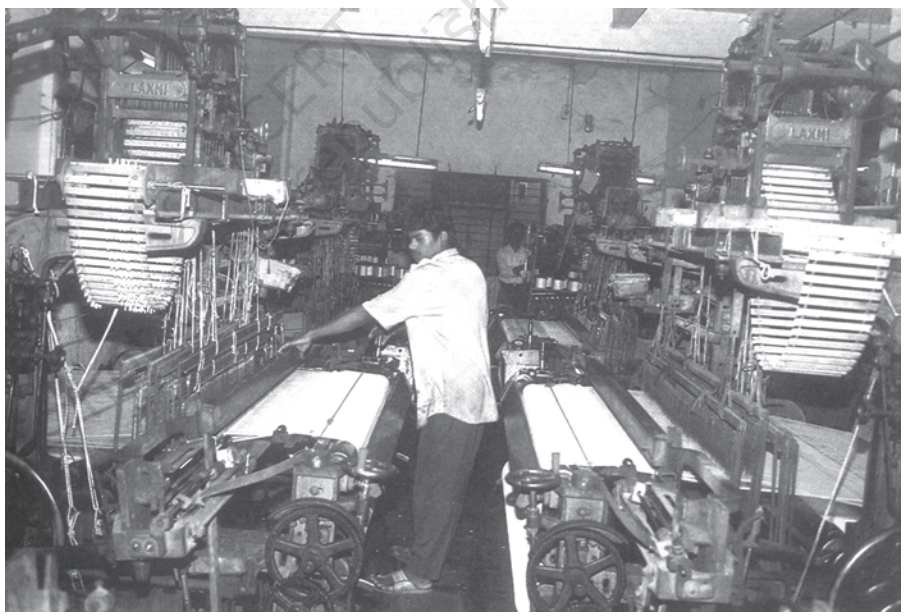

प्रिंटिंग प्रेस का एक दृश्य

अधिक मशीनों वाले उद्योगों में, कम लोगों को काम दिया जाता है, लेकिन जो होते हैं उन्हें भी मशीनी गति से काम करना होता है। मारुति उद्योग लिमिटेड में प्रत्येक मिनट में दो कारें तैयार होकर एकत्रित होने वाले स्थान पर आ जाती हैं। पूरे दिन में कामगारों को केवल 45 मिनट का विश्राम मिलता है - दो चाय की छुट्टियाँ साढ़े सात मिनट प्रत्येक और आधा घंटा खाने की छुट्टी। उनमें से प्रत्येक 40 वर्ष का होने तक पूरी तरह थक जाता है और स्वैच्छिक अवकाश ले लेता है। जबकि उत्पादन अधिक हो रहा है और कारखाने में स्थायी रूप से काम करने वालों की संख्या कम हो गई है। कारखाने में सभी कार्य जैसे सफ़ाई, सुरक्षा यहाँ तक कि पुर्जों का उत्पादन भी बाह्य स्रोतों से होता है। पुर्जे देने वाले, कारखाने के आसपास ही रहते हैं और प्रत्येक पुर्जे को दो घंटे या नियत समय में भेज देते हैं। बाह्य स्रोतों से किया गया कार्य समय पर पूरा हो जाता है और कंपनी को सस्ता पड़ता है। लेकिन इससे कामगारों में तनाव आ जाता है, अगर उनकी सप्लाई नहीं आ पाती, तो उनके उत्पादन का लक्ष्य विलंब से पूरा हो पाता है, और जब वह आ जाता है तो उसे रखने के लिए उन्हें भागदौड़ करनी पड़ती है। कोई आश्चर्य नहीं अगर ऐसा करने में वे पूरी तरह निढाल हो जाते हैं।

अब जरा सेवा के क्षेत्रों को देखा जाए। सॉफ्टवेयर में काम करने वाले लोग मध्यम वर्गीय और पूर्णत: शिक्षित होते हैं। उनका कार्य स्वत:स्फूर्त एवं रचनात्मक होता है। पर जैसाकि बॉक्स में दर्शाया गया है कि उनका कार्य भी टायलरिज्म लेबर प्रक्रिया के अनुरूप ही होता है।

बॉक्स 5.5

आई.टी. क्षेत्र में 'समय की चाकरी'

औसतन 10-12 घंटे का कार्यदिवस, और रातभर कार्य करने वाले कर्मचारी भी असामान्य बात नहीं हैं, (जिसे 'नाइट आउट' कहते हैं) जब उनकी परियोजना की अंतिमसीमा आ जाती है। लंबे कार्य घंटों का होना एक उद्योग की केंद्रीय 'कार्य संस्कृति' होती है। कुछ हद तक इसका कारण भारत और ग्राहक के देश के बीच समय की भिन्नता भी है, जैसे कि सम्मेलन का समय शाम का होता है जबकि अमेरिका में उस समय कार्य दिवस का प्रारंभ होता है। दूसरा कारण बाह्य स्रोतों की कार्य संरचना में अधिक कार्य का होना है जो, परियोजना की लागत और समयसीमा के तालमेल से जुड़ी होती है। एक आठ घंटे काम करने वाले इंजीनियर के श्रम के आधार पर काम को अंतिम सीमा तक पहुँचाने के लिए उसे अतिरिक्त घंटों और दिनों तक काम करना पड़ता है। अतिरिक्त कार्य घंटों को सामान्य व्यवस्थापित 'फ्लैक्सी-टाइम' सामान्य व्यवस्थापन के प्रयोग द्वारा तर्कसंगत (वैधता) बनाया जाता है, जो कि सैद्धांतिक रूप में कार्यकर्ता को अपने कार्य के घंटे नियत करने की छूट देती है (एक सीमा तक) लेकिन प्रायोगिक रूप में इसका अर्थ है कि वे तब तक कार्य करें जब तक कि वे हाथ में लिए हुए कार्य को समाप्त न कर दें। लेकिन इसके बावजूद भी जब उनके पास वास्तव में कार्य का दबाव नहीं होता, तब भी वे ऑफिस में देर तक रुक जाते हैं, जो कि या तो साथियों के दबाव के कारण होता है अथवा वे अपने अधिकारियों को दिखाना चाहते हैं कि वे कड़ी मेहनत कर रहे हैं।

(कैरोल उपाध्या फोर्थकमिंग)

इन कार्य घंटों के परिणामस्वरूप बंगलोर, हैदराबाद और गुड़गाँव जैसे स्थानों जहाँ बहुत सी आई.टी. कंपनियाँ और कॉल सेंटर हैं, दुकानों और रेस्तराओं ने भी अपने खुलने का समय बदल दिया है, और देरी से खुलने लगे हैं। अगर पति पत्नी दोनों नौकरी करते हैं तो बच्चों को शिशुपालन गृह में छोड़ा जाता है। संयुक्त परिवार जो कि लुप्तप्राय हो गए थे भी औद्योगीकरण के कारण फिर से बनने लगे हैं, हम देखते हैं कि दादा-दादी बच्चों की मदद से परिवार में पुन: स्थापित हो गए हैं।

समाजशास्त्र में एक महत्वपूर्ण विवाद है कि क्या औद्योगीकरण और नौकरी में परिवर्तन से जिसमें कि ज्ञान पर आधारित कार्य जैसे सूचना तकनीक है, क्या इनसे समाज की कुशलता बढ़ रही है? भारत में सूचना तकनीक की वृद्धि को वर्णित करने के लिए प्राय: एक सूक्ति सुनने में आती है 'नॉलेज इकॉनोमी' (ज्ञान आर्थिकी)। लेकिन आप एक किसान की दक्षता की तुलना किससे करेंगे जो यह जानता है कि कई सौ फसलों को कैसे उगाया जाता है। क्या आप उसकी मौसम, मिट्टी और बीज की समझ पर विश्वास करेंगे या कि एक सॉफ्टवेयर व्यवसायी पर? दोनों ही अपने कार्यों में दक्ष हैं लेकिन अलग तरह से। प्रसिद्ध समाजशास्त्री हैरी ब्रेवरमैन यह तर्क देते हैं कि वास्तव में मशीनों का प्रयोग कार्यकर्ताओं की दक्षता को कम करता है। उदारहण के लिए पहले वास्तुकार को नक्काशी में दक्षता भी हासिल थी परंतु अब कंप्यूटर उनके बहुत से काम कर देता है।

5.5 कार्यावस्थाएँ

हम सबको शक्ति, एक मजबूत घर, कपड़े और अन्य सामानों की आवश्यकता होती है, लेकिन हमें याद रखना चाहिए ये किसी के (प्राय: बहुत खराब अवस्था में) काम करने की वजह से हमें प्राप्त होते हैं। सरकार ने कार्य की दशाओं को बेहतर करने के लिए बहुत से कानून बना दिए हैं। अब हम एक खदान की अवस्था को देखते हैं जहाँ बहुत से लोग काम करते हैं। केवल कोयले की खान में ही 5.5 लाख लोग काम करते

© NCERT not to be republished

हैं। खदान एक्ट 1952 ने स्पष्ट किया है कि एक व्यक्ति खान में सप्ताह में अधिक से अधिक कितने घंटे कार्य कर सकता है, अतिरिक्त घंटों तक काम करने पर उसे अलग से पैसा दिया जाना चाहिए और सुरक्षा के नियमों का पालन होना चाहिए। बड़ी कंपनियों में इन नियमों का पालन किया जाता है, लेकिन छोटी खानों और खुली खानों में नहीं। यहाँ तक कि उप-ठेका की प्रवृत्ति भी बढ़ती जा रही है। कई ठेकेदार मजदूरों का रजिस्टर भी ठीक से नहीं रखते हैं, अत: वे दुर्घटना की अवस्था में किसी भी लाभ को देने की जिम्मेदारी से मुकर सकते हैं। एक खान का कार्य समाप्त होने पर कंपनी को उस स्थान पर किए गए गड्ढे को भरकर उस जगह को पहले जैसी कर देनी चाहिए, पर वे ऐसा नहीं करते हैं।

खुली खदान

भूमिगत खानों में कार्य करने वाले कामगार बाढ़, आग, ऊपरी या सतह के हिस्से के धँसने से बहुत खतरनाक स्थितियों का सामना करते हैं। गैसों के उत्सर्जन और ऑक्सीजन के बंद होने के कारण बहुत से कामगारों को साँस से संबंधित बीमारियाँ हो जाती हैं। जैसे क्षय रोग या सिलिकोसिस। जो खुली खानों में काम करते हैं वे तेज धूप और वर्षा में काम करते हैं, खान के फटने से या किसी चीज के गिरने से आने वाली चोट का सामना भी करते हैं। इस तरह होने वाली दुर्घटनाओं की दर भारत में अन्य देशों की तुलना में काफ़ी ज्यादा है।

बॉक्स 5.6

टाइम रनिंग आउट फॉर 54 ट्रेप्ड माइनर्स इन झारखंड
आइ.ए.एन.एस., सितंबर 7, 2006

नागदा की भटडीह कोयला खानों में 54 खानकर्मी जो बुधवार की रात को फँस गए, उनकी खानें गैसों की अधिकता की वजह से फट गई थीं। रात के करीब 8 बजे विस्फोट हुआ, जो कि मिथेन और कार्बन मोनोक्साइड की अधिकता और दबाव के कारण हुआ। यह कोयले की खान भारत कुकिंग कोल लिमिटेड (बी.सी.सी.एल.) की थी। विस्फोट इतना तेज था कि उसने 17 नंबर की झुकी हुई एक टन की ट्रोली को बाहर फेंक दिया।

चार बचाव टोलियों को गठित किया गया है। लेकिन उनके पास खान की गहराई में जहाँ दुर्घटना हुई थी पहनकर जाने के लिए समुचित मात्रा में ऑक्सीजन मास्क नहीं है।

खान में फँसे हुए अधिकाँश खानकर्मी 20 से 30 वर्ष की उम्र के हैं।

परिवार के लोगों और यूनियन लीडरों ने बी.सी.सी.एल. के व्यवस्थापकों पर दोषारोपण किया है। यह बी.सी.सी.एल. की जहरीली खानों में से एक है, व्यवस्थापकों ने वहाँ सुरक्षा के कोई उपाय उपलब्ध नहीं करा रखे हैं, संघ के एक सदस्य ने बताया कि खान में पानी छिड़कने की मशीन और गैस टेस्टिंग मशीन उपलब्ध होनी चाहिए थी, लेकिन वहाँ ऐसा कोई इंतजाम नहीं किया गया है।

कई उद्योगों में कामगार प्रवासी होते हैं। मछली संसाधन जो समुद्र के किनारे होते हैं में अधिकांशत: तमिलनाडु, कर्नाटक एवं केरल की एकल युवा महिलाएँ कार्य करती हैं। ये दस-बारह की संख्या में एक

छोटे से कमरे में रहती हैं, कभी-कभी तो वे वहाँ पारी में रहती हैं। युवा महिलाओं को आज्ञाकारी (विनम्र) और डटकर काम करने वाली माना जाता है। कई पुरुष भी अकेले प्रवास करते हैं, वे या तो अविवाहित होते हैं, या अपने परिवार को गाँव में छोड़कर आते हैं। सन् 1992 में उड़ीसा के 2 लाख प्रवासियों में से 85% एकल युवा थे। इन प्रवासियों के पास सामाजिकता निभाने के लिए बहुत कम समय होता है और जो भी थोड़ा बहुत होता है उसे वे अन्य प्रवासी कामगारों के साथ व्यतीत करते हैं। ऐसे राष्ट्र में जहाँ संयुक्त परिवार का हस्तक्षेप होता है, लोगों का भूमंडलीकरण की अर्थ व्यवस्था में काम करना उन्हें अकेलेपन और असुरक्षा की तरफ़ ले जाता है। अभी भी बहुत सी युवा महिलाएँ कुछ स्वतंत्रता और आर्थिक स्वायतत्ता का प्रतिनिधित्व करती हैं।

5.6 घरों में होने वाला काम

घरों पर किया जाने वाला काम आर्थिकी का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसमें लेस बनाना, ज़री या ब्रोकेड का काम, गलीचों, बीड़ियों, अगरबत्तियों और ऐसे ही अन्य उत्पादों को बनाया जाता है। ये कार्य मुख्य रूप से महिलाओं या बच्चों द्वारा किए जाते हैं। एक एजेंट (प्रतिनिधि) इन्हें कच्चा माल दे जाता है और संपूर्ण कार्य को ले भी जाता है। घर पर कार्य करने वालों को चीजों के नग (पीस) के हिसाब से पैसे दिए जाते हैं, जो इस बात पर निर्भर करता है कि उन्होंने कितने नग (पीस) बनाए हैं।

अब हम बीड़ी उद्योग के बारे में जानकारी लेते हैं। बीड़ी बनाने की प्रक्रिया जंगल के पास वाले गाँवों से शुरू होती है। वहाँ गाँव वाले तेंदु पत्ते तोड़कर जंगलात विभाग या निजी ठेकेदार को बेच देते हैं जो कि इसे वापस जंगलात विभाग को बेच देता है। औसतन एक आदमी दिन भर में 100 बंडल (हरेक में 50 पत्ते होते हैं) इकट्ठे कर सकता है। सरकार बीड़ी कारखानों के मालिकों को ये पत्ते नीलाम कर देती है, जो वे ठेकेदारों को दे देते हैं। ठेकेदार इनमें तंबाकू भरने के लिए वापस घर पर काम करने वालों को दे देता है। ये अधिकांशत: महिलाएँ होती हैं, ये पहले पत्तों को गीला करके गोलाकार कर देती हैं, फिर उसे काटती हैं, फिर तंबाकू भरकर उसे बाँध देती हैं। ठेकेदार बीड़ियों को वहाँ से

क्रियाकलाप 5.3

पता लगाइए कि बीड़ी कैसे बनती है और कैसे अभिसाधित होकर बीड़ी कामगार के पास पहुँचती है?

लेकर उसे उत्पादक को बेच देता है, जो इन्हें पकाता या सेकता है और अपने ब्रांड का लेबल लगा देता है। उत्पादक इन्हें बीड़ियों के वितरक को बेच देता है, जो उन्हें थोक विक्रेताओं को देता है, और फिर यह आप के पड़ोस वाली पान की दुकान पर बेच दी जाती है।

अब साथ में दिए गए पाई डाइग्राम को देखते हैं, कि कैसे खपत हुई बीड़ी के मूल्य को वितरित किया जाता है। (भंडारी, 2005:410) निर्माता को अपने ब्रांड की वजह से सबसे ज्यादा पैसा मिलता है, यह ब्रांड की शक्ति को दर्शाता है।

तैयार बीड़ी के मूल्य का वितरण

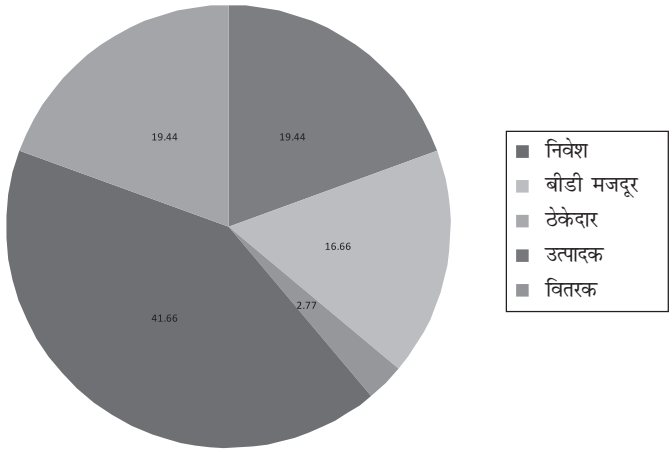

बॉक्स 5.7

एक बीड़ी कामगार की जीवनी

मधु 15 वर्ष की है और उसने स्कूल छोड़ दिया है। आठवीं में फेल होने के बाद उसने स्कूल जाना छोड़ दिया। उसके पिता दर्जी थे, जिनकी पिछले वर्ष मृत्यु हो गई। उसके पिता को क्षय रोग (तपेदिक) था, इसलिए बच्चों और माँ के लिए काम करना जरूरी हो गया। उसका बड़ा भाई 17 वर्ष का है और एक किराने की दुकान पर काम करता है, छोटा भाई 14 वर्ष का है और चॉकलेट की पैकिंग करता है। मधु और उसकी माँ बीड़ियों को रोल करती हैं। मधु ने बहुत छोटी उम्र से बीड़ियाँ रोल करना शुरू कर दिया था, उसे यह पसंद है, क्योंकि इससे उसे माँ और अन्य औरतों के पास बैठने और उनकी बातचीत सुनने का मौका मिलता है। वह रोल किए गए तेंदू पत्ते में तंबाकू भरती है। वह घर के कामकाज के अलावा दिनभर यही काम करती है। रोज़ाना लंबे समय तक एक ही मुद्रा में बैठे रहने के कारण उसकी पीठ में दर्द हो गया है। मधु फिर से स्कूल जाना चाहती है। (भंडारी 2005:406)

© NCERT not to be republished

5.7 हड़तालें एवं मजदूर संघ

बहुत से कामगार मजदूर संघ के भाग होते हैं। भारत में मजदूर संघों में क्षेत्रीयवाद और जातिवाद जैसी बहुत सी समस्याएँ होती हैं। एक मिल में काम करने वाले दत्ता ईसवाकर बताते हैं कि बंबई की मिलों में जाति छाई हुई है लेकिन सभी मिलों में नहीं:

> *वे उनके साथ बैठकर पान खाते हैं (विष्णु, एक महार कामगार जो मॉडर्न मिल में काम करता है) लेकिन वे उसके हाथ से पानी नहीं पीते। उसके साथ बुरा व्यवहार नहीं करते, वे उनके दोस्त हैं लेकिन वे उसके घर कभी नहीं जाते। अथवा वे किसी भी महार के खाने के डिब्बे से कुछ भी नहीं खाते। मजेदार बात है कि मराठी कामगार उत्तर भारत के कामगारों की जाति के बारे में पता नहीं लगा पाते। अत: उनके साथ वे अछूतों वाला व्यवहार नहीं करते।*
> *(मैनन और अदारकर 2004:113)*

कभी-कभी काम की बुरी दशाओं के कारण कामगार हड़ताल कर देते हैं। वे काम पर नहीं जाते, तालाबंदी की दशा में व्यवस्थापक मिल का दरवाजा बंद कर देते हैं और मजदूरों को अंदर जाने से रोकते हैं। हड़ताल करना मुश्किल फैसला होता है क्योंकि व्यवस्थापक अतिरिक्त मजदूरों को बुलाने का प्रयास करते हैं। कामगारों के लिए भी बिना वेतन के रहना मुश्किल हो जाता है।

अब हम 1982 में बंबई टैक्सटाइल मिल की उस प्रसिद्ध हड़ताल के बारे में बात करते हैं, जो व्यापार संघ के नेता, डा. दत्ता सामंत की अगुवाई में हुई थी, और जिसकी वजह से लगभग ढाई लाख कामगार और उनके परिवार के लोग प्रभावित हुए थे। कामगारों की माँग थी कि उन्हें बेहतर मजदूरी और अपने खुद के संघ बनाने की इजाजत दी जाए। बंबई इंडस्ट्रियल रिलेशंस एक्ट (बी.आई.आर.ए.) के अनुसार एक संघ बनाने की 'अनुमति' (एप्रूव्ड) लेनी चाहिए और अनुमति लेने का तरीका यही है कि हड़ताल का विचार त्याग दिया जाए। कांग्रेस-समर्थित राष्ट्रीय मिल मजदूर संघ (आर.एम.एम.एस.) ही एकमात्र अनुमति प्राप्त संघ था, और उसने और कामगारों को बुलाकर हड़ताल तोड़ने में सहायता की। सरकार ने भी कामगारों की मांगों को नहीं सुना। धीरे-धीरे दो सालों के बाद, लोगों ने काम पर जाना शुरू कर दिया क्योंकि वे परेशान हो चुके थे। लगभग एक लाख कामगार बेरोजगार हो गए, और वापस अपने गाँव लौट गए, या दिहाड़ी पर काम करने लगे, शेष आसपास के दूसरे छोटे कस्बों जैसे भिवंडी, मालेगाँव और इच्छालकारंजी के बिजली करघा क्षेत्रों में काम करने चले गए। मिल मालिक आधुनिकीकरण और मशीनों पर निवेश नहीं करते हैं। आजकल, वो अपनी मिलों को स्थावर संपदा व्यापारियों (रीयल स्टेट डीलर्स) को सुख-सुविधा संपन्न बहुमंजिली इमारतें बनाने के लिए बेचने का प्रयास कर रहे हैं। इस पर एक झगड़ा शुरू हो गया है कि बंबई के भविष्य को कौन परिभाषित करेगा? – कामगार जो इसे बनाते हैं? या मिल मालिक और स्थावर संपदा व्यापारी?

बॉक्स 5.8

जय प्रकाश भिलारे–*मिल के भूतपूर्व कामगार : महाराष्ट्र गिरनी कामगार संघ के महासचिव: कपड़ा मिल के कामगार केवल अपना वेतन और महँगाई भत्ता लेते हैं इसके अलावा उन्हें कोई और भत्ता नहीं मिलता। हमें केवल पाँच दिन का आकस्मिक अवकाश मिलता है। दूसरे उद्योगों के कामगारों को अन्य भत्ते जैसे यातायात, स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएँ इत्यादि मिलने शुरू हो गए साथ ही 10-12 दिन का आकस्मिक अवकाश भी। इससे कपड़ा मिल के कामगार भड़क गए... 22 अक्तूबर 1981 को स्टैंडर्ड मिल के कामगार डॉ. दत्ता सामंत के घर गए और उनसे अपनी अगुआई करने को कहा। पहले सामंत ने मना कर दिया, उन्होंने कहा कि कपड़ा मिलें बी.आई.आर.ए. के अंतर्गत आती हैं, और मुझे इसके बारे में अधिक जानकारी भी नहीं है। परंतु ये कामगार किसी भी हालत में ना नहीं सुनना चाहते थे। वे रात भर उनके घर के बाहर चौकसी करते रहे और अंत में सुबह सामंत मान गए।*

लक्ष्मी भाटकर–*हड़ताल की सहभागी: मैंने हड़ताल का समर्थन किया। हम रोजाना गेट के बाहर बैठ जाते थे और सलाह करते थे कि आगे क्या करना होगा। हम समय-समय पर संगठित होकर मोर्चे भी निकालते थे... मोर्चे बहुत बड़े हुआ करते थे... हमने कभी किसी को लूटा या चोट नहीं पहुँचाई मुझे कभी-कभी बोलने के लिए कहा गया, लेकिन मैं भाषण नहीं दे सकती। मेरे पाँव बुरी तरह काँपने लगते हैं! इसके अलावा मैं अपने बच्चों से भी डरती हूँ-वो क्या कहेंगे? वो सोचेंगे कि यहाँ हम भूखे मर रहे हैं और वो वहाँ अपना फोटो अखबार में छपवा रही है... एक बार हमने सेंचुरी मिल के शोरूम की तरफ़ भी मोर्चा निकाला। हमें गिरफ्तार करके बोरीवली ले जाया गया। मैं अपने बच्चों के बारे में सोच रही थी। मैं खाना नहीं खा पाई मैं अपने बारे में सोचने लगी कि हम लोग कोई अपराधी नहीं, मिल के कामगार हैं। हम अपने खून पसीने की कमाई के लिए लड़ रहे हैं?*

किसन सालुंके–*स्पिन मिल्स का भूतपूर्व कामगार: सेंचुरी मिल में हड़ताल शुरू हुए मुश्किल से डेढ़ महीना ही हुआ होगा कि आर.एम.एम.एस. वालों ने मिल खुलवा दी। वे ऐसा कर सकते हैं क्योंकि उन्हें राज्य और सरकार दोनों का समर्थन प्राप्त है। वे बाहर के लोगों को बिना उनके बारे में पूरी तरह जाने मिल के अंदर ले आए ... भोंसले (तब महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री) ने 30 रुपए बढ़ाने की पेशकश की। दत्ता सामंत ने इस विषय पर विचार करने के लिए मीटिंग बुलाईं आगे के सारे क्रियाकलाप यहीं होते थे। हमने कहा, 'हमें यह नहीं चाहिए'। अगर हड़ताल के नेताओं के पास कोई मर्यादा, कोई बातचीत नहीं है, हम बिना किसी उत्पीड़न के काम पर वापस जाने के लिए तैयार नहीं हैं।*

दत्ता इसवालकर–*मिल चाल्स टेनैंट एसोसिएशन के अध्यक्ष : (प्रेसीडेंट) कांग्रेस ने बाबू रेशिम, रमा नायक और अरुण गावली जैसे सभी गुंडों को स्ट्राइक खत्म करवाने के लिए जेल से बाहर कर दिया। हमारे पास स्ट्राइक तोड़ने वालों को मारने के अलावा और कोई विकल्प नहीं था। हमारे लिए यह जीवन मृत्यु का प्रश्न था।*

भाई भोंसले–*1982 की हड़ताल में आर.एम.एम.एस. के महासचिव: हमने तीन महीने की हड़ताल के बाद लोगों को वापस काम पर बुलाना शुरू कर दिया... हम सोचते थे, कि अगर लोग काम पर जाना चाहते हैं तो उन्हें जाने देना चाहिए, वास्तव में यह उनकी सहायता ही थी... माफिया गैंग के बीच में आ जाने के बारे में, मैं उसके लिए उत्तरदायी था... ये दत्ता सामंत जैसे लोग सुविधाजनक समय का इंतजार कर रहे हैं, और आराम से काम पर जाने वालों का इंतजार कर रहे हैं। हमने परेल एवं अन्य स्थानों पर प्रतिपक्षी समूहों को तैयार किया था। स्वाभाविक रूप से वहाँ कुछ झगड़ा कुछ खूनखराबा हो सकता था... जब रमा नायक की मृत्यु हुई तो उस वक्त के मेयर भुजबल उसके सम्मान में अपनी ऑफ़िस की कार में आए। इन लोगों की ताकतों को एक समय या अन्य अनेक लोगों द्वारा राजनीति में इस्तेमाल किया गया।*

किसन सालुंके–*भूतपूर्व मिल कामगार: वह मुश्किल समय था हमने अपने सारे बर्तन बेच दिए थे। हमें अपने बर्तनों को सीधा उठाकर ले जाते हुए शर्म आती थी इसलिए हम उन्हें बोरियों में लपेटकर बेचने के लिए दुकानों पर ले जाते थे। वो ऐसे दिन थे जब हमारे पास खाने के लिए पानी के अलावा कुछ नहीं था, हम लकड़ी के बुरादे को ईंधन की जगह जलाते थे। मेरे तीन बेटे हैं। कई बार बच्चों के पीने के लिए दूध नहीं होता था, मुझसे उनकी यह भूख बर्दाश्त नहीं होती थी। मैं अपनी छतरी लेकर घर से बाहर चला जाता था।*

सिंदु मरहने–*भूतपूर्व मिल कामगार: आर.एम.एम.एस. वाले और गुंडे मुझे भी जबरदस्ती काम पर वापस ले जाने के लिए आए। पर मैंने जाने से इंकार कर दिया... जो महिलाएँ मिल में रह कर काम कर रही थीं उनके साथ क्या हो रहा था इस बारे में तरह-तरह की अफवाहें चारों तरफ़ फैली थीं। वहाँ बलात्कार की घटनाएँ घटी थीं।*

© NCERT not to be republished

बॉक्स 5.8 का अभ्यास

बॉक्स 5.8 के अभ्यास - 1982 की हड़ताल के बारे में दिए गए परिच्छेद को पढ़कर अंत में दिए गए प्रश्नों के उत्तर दें।

1. 1982 की कपड़ा मिल हड़ताल के विभिन्न परिप्रेक्ष्यों का वर्णन कीजिए।
2. कामगार हड़ताल पर क्यों गए?
3. दत्ता सामंत ने किस तरह हड़ताल की नेतागिरी स्वीकार की?
4. हड़ताल तोड़ने वालों की क्या भूमिका थी?
5. माफिया गिरोहों ने किस तरह इन स्थानों पर अपनी जगह बनाई?
6. इस हड़ताल के दौरान महिलाएँ कैसे परेशान हुईं, और उनके मुख्य सरोकार क्या थे?
7. हड़ताल के दौरान कामगार और उनके परिवार कैसे अपने आप को बचाए रख पाए?

1. अपने आस-पास वाले किसी भी व्यवसाय को चुनिए–और इसका वर्णन निम्नलिखित पंक्तियों में कीजिए : (क) कार्य शक्ति का सामाजिक संघटन–जाति, जेंडर, आयु, क्षेत्र; (ख) मजदूर प्रक्रिया–काम किस तरह किया जाता है; (ग) वेतन एवं अन्य सुविधाएँ; (घ) कार्यावस्था–सुरक्षा, आराम का समय, कार्य के घंटे इत्यादि।

अथवा

2. ईंटे बनाने के, बीड़ी रोल करने के, सॉफ्टवेयर इंजीनियर या खदान के काम जो बॉक्स में वर्णित किए

गए हैं के कामगारों के सामाजिक संघटन का वर्णन कीजिए। कार्यावस्थाएँ कैसी हैं और उपलब्ध सुविधाएँ कैसी हैं? मधु जैसी लड़कियाँ अपने काम के बारे में क्या सोचती हैं?

3. उदारीकरण ने रोजगार के प्रतिमानों को किस प्रकार प्रभावित किया है?

संदर्भ ग्रंथ

अनंत, टी.सी.ए. 2005, 'लेबर मार्केट रिफोर्म्स इन इंडिया : ए रिव्यू'। इन बिबेक डेबरॉय एंड पी.डी. कौशिक (संपा), रिफार्मिंग द लेबर मार्केट, पृ. 235-252, एकेडेमिक फाउंडेशन, नयी दिल्ली

भंडारी, लवीश 'इकॉनोमिक एफीशियेंसी ऑफ सब-कॉन्ट्रेक्टेड होम-बेस्डर वर्क', बिबेक डेबरॉय एंड पी डी कौशिक (संपा) में रिफार्मिंग द लेबर मार्केट। पृष्ठ 397-417, एकेडमिक फाउंडेशन, नयी दिल्ली

ब्रेमन, जान 2004, द मेकिंग एंड अनमेकिंग ऑफ़ एन इंडस्ट्रियल वर्किंग क्लास। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली

ब्रेमन जान 1999, 'द स्टडी ऑफ़ इंडस्ट्रियल लेबर इन पोस्ट-कॉलोनियल इंडिया-द फॉरमल सेक्टर : एन इंट्रोडक्ट्री रिव्यू', कंट्रीब्यूशन्स टू इंडियन सोशियोलॉजी, वॉल्यूम 33 (1 तथा 2), जनवरी-अगस्त 1999, पृष्ठ 1-42

ब्रेमन जान 1999, "द स्टडी ऑफ इंडस्ट्रियल लेबर इन पोस्ट-कोलोनियल इंडिया- द फॉरमल सेक्टर : एन इंट्रोडक्ट्री रिव्यू"। कंट्रीब्यूशन्स टू इंडियन सोशयोलॉजी, वॉल्यूम 33 (1 तथा 2), जनवरी-अगस्त 1999, पृष्ठ 407-431

ब्रेमन, जान और अरविंद एन. दास 2000, डाउन एंड आउट, लेबरिंग अंडर ग्लोबल केपिटलिज़्म। ऑक्स्फोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली

दतार, छाया, 1990, बीड़ी वर्कस इन निपानी। इलिना सेन, ए स्पेस विदिन द स्ट्रगल में कली फॉर वूमेन, पृष्ठ 1601-81।, नयी दिल्ली

गाँधी, एम.के. 1909, हिंद स्वराज एंड अदर राइटिंग्स। संपादन, एंथनी जे. परेल। कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैंब्रिज

जॉर्ज, अजिथा सुसन, 2003, लॉज़ रिलेटिड टू माइनिंग इन झारखंड। रिपोर्ट फॉर यू.एन.डी.पी.

होलस्ट्रोम, मार्क, 1984, इंडस्ट्री एंड इनइक्वालिटी : द सोशल एंथ्रोपोलॉजी ऑफ़ इंडियन लेबर, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैंब्रिज।

जोशी, चित्रा, 2003, लॉस्ट वर्ल्ड्स, इंडियन लेबर एंड इट्स फॉरगोटन हिस्ट्रीज़, दिल्ली, परमानेन्ट ब्लैक, नयी दिल्ली।

केर, क्लार्क एट एल, 1973, इंडस्ट्रियलिज़्म एंड इंडस्ट्रियल मेन, पेंगुइन, हारमॉनड्सवर्थ

कुमार, के. 1973, प्रोफेसी एंड प्रोग्रेस, ऐलन लेन, लंदन

मेनन, मीना और नीरा आदरकर 2004, वन हंड्रेड इयर्स, वन हंड्रेड वॉयसेज़ : द मिलवर्कर्स ऑफ़ गोरेगाँव : एन ओरल हिस्ट्री। सीगल प्रेस, कोलकाता

पी.यू.डी.आर. 2001, हार्ड ड्राइव : वर्किंग कंडीशस एंड वर्कर्स स्ट्रगल्स एट मारुति, पी.यू.डी.आर., दिल्ली

राय, तीर्थंकर 2001, 'आउटलाइन ऑफ़ ए हिस्ट्री ऑफ़ लेबर इन ट्रेडीशनल स्माल-स्केल इंडस्ट्री इन इंडिया', एन.एल.आई. रिसर्च स्टडीज़ सीरिज़ नं. 015/2001, वी.वी गिरि नेशनल लेबर इंस्टीट्यूट, नोएडा

उपाध्या, केरोल फोर्थकमिंग कल्चर इनकॉरपोरेटेड, कंट्रोल ओवर वर्क एंड वर्कर्स इन द इंडियन सॉफ्टवेयर आउटसोर्सिंग इंडस्ट्री

© NCERT not to be republished